चतुर्थ अध्याय

आलोच्य नाटकों में चित्रित वातावरण का अनुशीलन

चतुर्थ अध्याय

आलोच्य नाटकों मे चित्रित वातावरण का अनुशीलन

4.1 प्रस्तावना :-

नाटक मानव जीवन का चित्रण है। जिसमें प्रधानता मनुष्य के चरित्र का सजीव वर्णन रहता है। निश्चय है मनुष्य का संबंध अपने युग, समाज, देश और परिस्थितियों से रहता है। अथवा मानव की पृष्ठभूमि रूप में देशकाल का चित्रण एक आवश्यक अंग है।

नाटक की कथा को सत्य रूप देने के लिए उसे सजीव बनाने के लिए वातावरण की सृष्टी नाटककार के लिए अनिवार्य है। व्यक्तित्त्व के निर्माण में वातावरण का बहुत कुछ हाथ होता है इसलिए उसके व्यक्तित्त्व को स्पष्ट करने के लिए भी नाटक में वातावरण की सृष्टि अनिवार्य है। देशकाल के अंतर्गत किसी देश या समाज की सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक परिस्थितियों, आचार-विचार, रीति-रिवाज, रहन-सहन, समाज की कुरीतियों एवं विशेषताएँ आदि समझी जाती है। प्राकृतिक चित्रण भी उद्दीप्त रूप में पात्रों की मानसिक स्थिति को निश्चित करने में सहायक होते है। देशकाल में स्थानीय रंग होने पर नाटक में प्रभावात्मकता आ जाती है तथा कृत्रिमता नष्ट होकर स्वाभाविकता बढ़ जाती है। मगर देशकाल वातावरण की सृष्टी करते समय एक बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि देशकाल वातावरण कथानक के स्पष्टीकरण में साधन रहे, साध्य न बन जाए। अत: हम इसके बाद देशकाल वातावरण की थोड़ीसी जानकारी करेंगे।

4.2 देशकाल वातावरण से तात्पर्य :-

देशकाल से तात्पर्य है - समाज में वर्णित आचार-विचार, रीति-रिवाज, रहन-सहन और परिस्थिति आदि से नाटकों में स्वाभाविकता और सजीवता का आभास देने के लिये देशकाल तथा वातावरण का ध्यान रखना पड़ता है। प्रत्येक पात्र और उसका कार्य किसी विशिष्ट देश, समय

और वातावरण में होता है। अत: नाटक की पूर्णता के लिये इन सबका वर्णन आवश्यक है।

4.3 देशकाल वातावरण का स्वरूप :-

देशकाल और वातावरण का महत्त्व साहित्य की सभी विधाओं में है; किन्तु नाटक विधा में उसका सर्वाधिक महत्त्व होता है। नाटक में घटित होनेवाली घटना, स्थान, समय एवं परिवेश अर्थात वातावरण को निर्देशित करना नाटक का प्रमुख तत्त्व माना जाता है। कु. शशिबाला पंजाबी के मतानुसार - ''वातावरण उन समस्त परिस्थितियों का संकुल नाम है, जिन पात्र और कथानक को संघर्ष करते हुए आगे बढ़ना होता है।''

देशकाल वातावरण साहित्यिक तत्त्व के अंतर्गत आनेवाला महत्त्वपूर्ण तत्त्व होते हुए भी अधिकतर मंचीय कलाद्वारा ही साकार होता है। यदि नाटककार देशकाल वातावरण को छोड़कर कथावस्तु के सहारे चरित्रों को केवल भाषण देते या कुछ क्रियाओं को ही चित्रित करे तो दर्शकों को जबरदस्ती से 'विश्वास रखो'' के लिए उकसाना होगा। यदि दर्शक मंचीय घटनाओं को सही वातावरण, स्थल तथा काल में अनुभव नहीं करता है तो सत्याभास से वंचित रह सकता है। Make belive के लिए मंचीय घटनाओं को छोड़कर अन्य साहित्यिक कृतियों में रचनाकार वर्णन द्वारा पाठकों के लिए तत्कालीन स्थान एवं परिस्थिति का परिणाम दे सकता है। नाटककार अपनी पाण्डुलिपि में असंभव, अव्यवहार्य मनचाहे स्थल काल परिवेश का उल्लेख नहीं कर सकता।

4.3.1 मंचीय घटनाओं को वास्तविकता प्रदान करनेवाला तत्त्व -

देशकाल वातावरण की निर्मिति के लिए आवश्यक सूचनाएँ देने हेतु नाटककार का दृश्यसज्जा, प्रकाश रचना, संगीत पार्श्व ध्वनियाँ, रूपसज्जा आदि कलाओं से परिचित होना आवश्यक है। इन कलाओं में हो रहे आधुनिक अन्वेषण तथा परिवर्तन की जानकारी वह रखती है। सामान्य दर्शक मंच पर देशकाल वातावरण के आयोजन से प्रभावित रहता है और प्रस्तुत तत्त्व

उसके आकर्षक का केंद्र भी होता है। देशकाल वातावरण द्वारा नाटककार दर्शकों को अपेक्षित वातावरण में ले जाकर नाटक समझा सकता है। पारसी मंच की व्यावसायिक सफलता का यही एक प्रमुख कारण था। हालाँकि पारसी मंच इस तत्त्व पर कुछ अधिक मात्रा में अनावश्यक जोर देता था। मंचीयता की विविध शैलियों में प्रस्तुत तत्त्व का भिन्न-भिन्न पध्दति से उपयोग किया जाता है। नाटककार अपनी कथावस्तु के अनुरूप मंचीय परिणाम के लिए प्रस्तुत तत्त्व की विशिष्ट शैली का चयन करता है। प्रस्तुत तत्त्व केवल उपभोक्ता दल के दर्शक एवं समीक्षकों के लिए ही नहीं बल्कि स्वयं रंगकर्मियों की मानसिक वृत्ति का निर्माण करने के लिए भी रस परिपोषक सिध्द हुआ है। नाटककार में जादुई वातावरण का निर्माण इसी तत्त्व के कारण होता है। यदि नाटक से प्रस्तुत तत्त्व हटा दिया जाए तो मदारी के खेल और नाट्य प्रदर्शन में अधिक अंतर ही नहीं रह जाएगा।

4.3.2 प्राचीन भारतीय स्वरूप -

भारतीय प्राचीन नाटकों में देशकाल वातावरण विषयक अधिकतर कार्य रूपसज्ञा एवं संवाद तत्त्व पर ही निर्भर रहता था। संस्कृत नाटकों में स्थान निर्देश भी चरित्रों के द्वारा ही हो जाता था। क्योंकि उस समय प्रतीकात्मक अभिनय होता था। उसके लिए रंगाध्यक्ष को कुछ करना नहीं पड़ता था। पात्र स्वयं ही अपने अभिनय और बातचीत से उसका संकेत करते थे।

4.3.3 प्राचीन पाश्चात्य स्वरुप -

युरोपीय नाटककारों की स्थल काल विषयक संकल्पना संकलनत्रय के कारण सुविधाजनक रहा करती थी। शेक्सपिअर के काल में स्थल सूचक फलक मंच पर लगाये जाते थे।

4.3.4 न कोई सीमा, न मर्यादा -

वर्तमान नाटकों के लिए देशकाल वातावरण विषयक न कोई सीमा है, न कड़े नियम है। नुक्कड़ नाटकों में तो प्रस्तुत तत्त्व की कोई आवश्यकता ही नहीं होती। वर्तमानकालीन आधुनिक

नाटक कहीं भी घटित हो सकता है चाहे समंदर, आकाश, पानी या भूगर्भ में भी। आधुनिक मंचीय तत्त्वों के कारण इन्हें घटित होना दिखाना संभव ही हो गया है।

4.3.5 अनेक मंचीय तत्त्वों की सहायता से संभव -

देशकाल वातावरण का स्वरूप कथावस्तु पर निर्भर होता है। यदि कथावस्तु वास्तविक है तो पृथ्वी या आकाश से संबंधित कोई भी स्थल आ सकता है। यदि कथावस्तु काल्पनिक है तो वे सब स्थान आ जाते है तो शुध्द रूप से कल्पित हो। नाटककार मंचीयता की दृष्टि से जिन नाट्य दलों या नाट्य निर्माता, रंगकर्मी दर्शकों के लिए लिख रहा है। उनकी मानसिक तथा आर्थिक स्थिति को नजर अंदाज नहीं कर सकता। मंचीयता की दृष्टि से साधारण से साधारण मंच पर सहज साध्य देशकाल वातावरण निर्माण की योजना नाटक के बार-बार मंचन के लिए सहायक होती है। मंचीय समस्याओं से वाकीफ नाटककार जटिल, समय का व्यय करनेवाली, दुसाध्य, खर्चीली पध्दति को टाल देता है। ध्वनि, पार्श्वसंगीत एवं प्रकाश योजना के द्वारा आज कुशलता से मंचीय वातावरण का निर्माण किया जाता है।

4.3.6 स्थल, काल, समय तथा संस्कृति दर्शक हो -

प्रस्तुत तत्त्व संबंधी अधिकतर जानकारी रंग निर्देशों द्वारा प्राप्त होती हैं। प्रस्तुत जानकारी कथावस्तु के अनुरूप विवेचित देश की संस्कृति, लोग, प्रकृति तथा उनकी मान्यताओं का समग्र विवरण देता है क्योंकि चरित्रों के स्वभाव पर प्राकृतिक परिवेश का प्रभाव होता है। प्राकृतिक परिवेश का मनोवैज्ञानिक प्रभाव भी होता है। स्थान, काल तथा समय संबंधी निर्देश आवश्यक होते हैं। जैसे - प्रात:काल, दोपहर, संध्या, रात्रि, मध्यरात्रि आदि। जो प्रकाश व्यवस्था के लिए सुविधाजनक होती है। ऐतिहासिक काल की दृष्टि से भी निश्चित समय, स्थल, काल उल्लेख, दृश्य-सज्जा, एवं रुपसज्जा के लिए महत्त्वपूर्ण होता है। वर्षा, बादल, बिजली, तुफान, सर्दी आदि के संकेत आवश्यक होते हैं। नाटकीय स्थलों का निर्देश करते हुए रंग के परिणाम स्थान आदि

को ध्यान में रखते हुए प्रदर्शन की संभावना तथा प्रदर्शनीय समाज के युग, संस्कृति, पात्र और देश का नाटककार को ध्यान रखना चाहिए।

इस प्रकार नाटककार को देशकाल वातावरण का चित्रण करते समय इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि वह कथानक के स्पष्टीकरण का साधन ही रहें, स्वयं साध्य न बन जाए। इसी प्रकार प्रसंगानुसार नाटकों में प्रकृतिचित्रण भी किया जाना चाहिए। प्रकृतिचित्रण से पात्रों विभिन्न परिस्थितियों में विभिन्न मनस्थितियों एवं प्रक्रियाओं तथा उनके संस्पर्श से उनके बनते-बिगड़ते चेतन मन की स्थिति का यथार्थ चित्रण किया जाता है।

4.4 देशकाल वातावरण के गुण :-

नाटक में देशकाल अथवा वातावरण चित्रण के कुछ सांकेतिक आधार और गुण है, जिनका पालन करना नाटककार के लिए आवश्यक हो जाता है। भले ही वह प्राकृतिक, सामाजिक अथवा राजनीतिक किसी भी प्रकार की पृष्ठभूमि उपस्थित करना चाहता हो, इन गुणों का समावेश देशकाल अथवा वातावरण के चित्रण को अभिव्यक्तिगत पूर्णता प्रदान करता है। उनसे उसमें विश्वसनीयता भी आ जाती है। इसलिए किसी नाट्य कृति में इस तत्त्व के अंकन के समय इन गुणों का सतर्क निर्वाह करना आवश्यक है। वह गुण निम्नलिखित है -

4.4.1 वर्णनात्मक सूक्ष्मता -

इस आधार पर नाटक में देशकाल तथा वातावरण सृष्टि की सफलता का पहला तत्त्व वर्णन की सूक्ष्मता पर निर्भर करता है। स्थूल प्रकृति वर्णन नाट्य रूपी साहित्य माध्यम में कोई महत्त्व नहीं रखता, यहाँ तक कि विविध वर्णनों के अंतर्गत उसकी कोई विशेष उपादेयता सिध्द नहीं की जा सकती है। यदि कोई नाटककार अपनी रचना में वातावरण का चित्रण करते समय किसी प्रदेश का प्राकृतिक, सामाजिक अथवा राजनीतिक वातावरण के चित्रण के अंतर्गत ऐसे अप्रासंगिक वर्णनों की योजना करता है, जो युग अथवा क्षेत्र की दृष्टि से किसी दृष्टिकोन की सूचना नहीं देते तब

उनकी कलात्मकता संदिग्ध हो जाती है। अत: नाटक में देशकाल वातावरण का ध्यान रखते समय वर्णनात्मक सूक्ष्मता का होना आवश्यक है।

4.4.2 विश्वसनीय कलात्मकता -

देशकाल और वातावरण की सृष्टि का दूसरा महत्त्वपूर्ण गुण विश्वसनीय कलात्मकता है। नाटककार एक नये संसार की सृष्टि करता है, लेकिन उस सृष्टि और कथावस्तु का मूल स्त्रोत वह वास्तविक जीवन होता है, जिसे वह स्वयं जीता है और जिसे वह चारों ओर देखता समझता है। इस सृष्टि का कल्पनाजगत काल सापेक्ष होता है और जो कार्य या व्यापार या घटनाएँ नाटककार चित्रित करता है। कला पूर्ण सफल तभी हो सकती है, जब वह काल्पनिक होते हुए भी सच्चाई का बोध कराये।

4.4.3 उपकरणात्मक सन्तुलन -

देशकाल और वातावरण का चित्रण का तीसरा उल्लेखनीय गुण उसका उपकरणात्मक सन्तुलन है। नाटक के मूल आकार को ध्यान में रखते हुए वातावरण और चित्रण का उपकरणात्मक सन्तुलन होना आवश्यक है।

4.4.4 चित्रात्मकता -

यह एक महत्त्वपूर्ण गुण है। यह गुण उन नाटकों में विद्यमान होता है, जिनमें प्राकृतिक वातावरण का विशेष रुप से चित्रण किया जाता है। नाटक की कथावस्तु तथा पात्रयोजना से अनुकूल प्रसंग में वर्णित प्राकृतिक वातावरण प्राय: चित्रात्मक हो जाता है।

4.4.5 वास्तविकता -

नाटक में चित्रित देशकाल अथवा वातावरण तत्त्व में वास्तविकता होनी चाहिए। नाटककार अपनी रचना में युग जीवन के चाहे जिस पक्ष का चित्रण करे, वह पाठक को वास्तविक

लगना चाहिए। इस प्रकार देशकाल वातावरण का चित्रण करते समय उपर्युक्त गुणों का होना अत्यावश्यक है।

4 .5 विवेच्य नाटकों में देशकाल और वातावरण :-

देशकाल और वातावरण का महत्त्व साहित्य की सभी विधाओं में है। किन्तु नाटक विधा में उसका सर्वाधिक महत्त्व होता है। नाटक में वास्तविकता, सजीवता और गरिमा लाने के लिए अनुकूल वातावरण का होना नितांत आवश्यक है। देशकाल परिस्थितियों, परंपराओं और जीवन पध्दतियों की दिग्दर्शिका, वेशभूषा आदि का जितना स्वाभाविक चित्रण नाटक में होगा, उतनीही सजीवता एवम् प्रभावोत्पादकता उसमें आ सकेगी। भौगोलिक परिवेश की भी वातावरण के लिए पर्याप्त उपयोगिता है। नाटकों में तो देशकाल एवम् वातावरण का चित्रण अपरिहार्य है। उसमें तत्कालीन, सामाजिक, राजनीतिक परिवेश, भाषा, आचार-व्यवहार एवम् रहन-सहन का यथार्थपरक चित्र प्रस्तुत करना नाटककार के लिए अनिवार्य होता है। क्योंकि इसके बिना किसी भी नाटक की कथा स्वाभाविक एवम् सहज संप्रेषणीय नहीं बन सकती।

वातावरण के विषय में यह अत्यंत स्मरणीय है कि यह कथानक एवम् चरित्र के प्रकाशन तथा स्पष्टीकरण का साधन मात्र है। अत: साधन कहीं साध्य बन बन जाए, या साध्य के व्यक्तित्तव आद्यन्त आच्छादित करके हीन एवं उपेक्ष्य न बना दे, इस मूल पकड़ का ध्यान निर्माता को आरंभ से ही होना चाहिए। वातावरण में देशकाल ग्राह्य हैं और साथ ही आन्तरिक मनोदशा का भी चित्रण उसमें हो। इन दोनों के द्वारा ही सच्चा एवं पूर्ण वातावरण तैयार होता है। प्राकृतिक चित्रणों और पात्रों की मानसिक स्थिति का सामंजस्य नाटक को पर्याप्त मात्रा में स्पंदनयुक्त, सरस एवं प्रभावी बनाता है।

विवेच्य नाटकों में चित्रित देशकाल एवं वातावरण का मूल्यांकन हम निम्नलिखित दृष्टियों से कर सकते है -

1. आंतरिक वातावरण 2. बाह्य वातावरण

आंतरिक वातावरण में घटनाओं और परिस्थितियों का चित्रण आता है। तथा पात्रों की मानसिक स्थिति, उनके हावभाव तथा अंर्तद्वन्द्व का चित्रण आता है। बाह्य वातावरण में तत्कालीन सभी परिस्थितियाँ आ जाती हैं। इन दोनों प्रकार की वातावरण की सृष्टि से विवेच्य नाटकों पर दृष्टिपात करेंगे और यह देखेंगे कि इनका चित्रण कितना और किस रूप में विवेच्य नाटकों में संभव हो सका है।

4.5.1 आंतरिक वातावरण -

आंतरिक वातावरण में निम्नलिखित परिस्थितियों का चित्रण होता है -

1. घटनाओं और परिस्थितियों का चित्रण
2. पात्रों की मानसिक स्थिति का चित्रण
3. पात्रों के हावभाव और अंर्तद्वन्द्व का चित्रण

1. घटनाओं और परिस्थितियों का चित्रण -

घटनाओं और परिस्थितियों के चित्रण द्वारा नाटककार नाटक की पृष्ठभूमि का वातावरण तैयार करता है। इसके साथ ही परिस्थितियाँ स्वाभाविक बनती है। घटना विशेष अथवा परिस्थिति विशेष से आंतरिक वातावरण मूर्त रूप में सामने आता है। जैसे कि -

'सिन्दूर की होली' नाटक में मिश्रजी ने आज के भारतीय जीवन क और हमारे परिवेश का एक सही चित्रण किया हैं। भौतिकवादी दृष्टिकोण अपनाने के कारण नैतिकता की हानि हो गयी है। आज मानव भौतिक सुख-सुविधाओं की प्राप्ति के लिए अनेक अनुचित मार्गों का अवलंब करने लगा है। इसी का ही मुरारीलाल एक प्रतिनिधी पात्र है। वैयक्तिक स्वार्थी प्रवृत्ति के कारण मनुष्य किस मार्ग तक चल सकता है इसका विवरण इस प्रस्तुत नाटक में किया है। इस

विवेच्य नाटक की अधिकारिक कथा मुरारीलाल के घूस लेने, रजनीकान्त के मारे जाने तथा उसकी लाश के हाथों चंद्रकला के द्वारा अपनी माँग में सिन्दूर भर लेने की है परन्तु इसके साथ ही अन्य प्रासंगिक कथाएँ भी बड़ी कलात्मकता के साथ जोड़ दी गयी है। इन प्रासंगिक कथाओं के संदर्भ में मनोजशंकर और चंद्रकला, मुरारीलाल और मनोजशंकर के पिता, भगवन्तसिंह और रजनीकान्त, रजनीकान्त और हरनन्दनसिंह, भगवत्नसिंह और हरनन्दनसिंह तथा मनोरमा, मनोजशंकर और मुरारीलाल के संबंधों की कथाएँ आदि देखी जा सकती है। ये प्रासंगिक कथाएँ अपना स्वतंत्र अस्तित्व रखते हुए भी मूल-कथानक से अंगों के रूप में निबध्द हैं। इन सभी घटनाओं और परिस्थितियों का चित्रण प्रस्तुत नाटक में किया है। जिसके कारण नाटक में रोचकता आ गयी है।

मिश्रजी द्वारा लिखित 'संन्यासी' नाटक की मूल कथा विश्वकान्त और मालती को लेकर चलती है। परन्तु मुरलीधर और किरणमयी की कथा भी उसके साथ जुड़ी हुई है। 'संन्यासी' नाटक में दिये गये कालेज के वातावरण को अस्वाभाविक नहीं कहा जा सकता। शिक्षा क्षेत्र में व्याप्त अनैतिकता और भ्रष्टाचार विशेषकर शिक्षकों में उनका आलोच्य विषय बना हैं। मुरलीधर के चरित्र के माध्यम से तत्कालीन पत्रकारों के जीवन की संक्षिप्त परन्तु सच्ची झाँकी प्रस्तुत की गई है। उनका जीवन किस प्रकार हमेशा संकट में रहता था, उन्हें कैसी - कैसी यातनाएँ सहनी पड़ती थी, देश के लिये कितना बलिदान करना पड़ता था, इन सभी बातों का अनुमान इन नाटकों को पढ़ने से सहज ही लग जाता है। अनमेल विवाह तथा दहेज की प्रथा की चर्चा भी नाटक में है। आदर्श राजनैतिक विचारों की अभिव्यक्ति प्रमुख पात्रों के संवादों व्दारा की गई है। इन सभी घटनाओं और परिस्थितियों का चित्रण नाटककार ने सफलतापूर्वक किया है।

2. पात्रों की मानसिक स्थिति का चित्रण -

आंतरिक वातावरण की दृष्टि से मानसिक स्थिति का चित्रण मिश्रजी ने अत्यंत सशक्त ढंग से किया है। इस चित्रण के द्वारा पात्रों की मानसिक स्थिति और तज्जनित वातावरण को मूर्त

कर दिया है। जैसे कि 'सिन्दूर की होली' नाटक में मुरारीलाल मनोज को पढ़ने के लिए विलायत भेजते है। उसकी सभी जिम्मेदारी वे उठा लेते है। मनोज मुरारीलाल के मित्र का लड़का है। एक बार मनोज के स्वास्थ के लिए अपना पूरा वेतन भेज देते है। लेकिन वे पैसे मिलते ही उसका मानसिक स्वास्थ बिघड जाता है। वह सोचता है कि इतना सबकुछ मुरारीलाल उनके लिए क्यों करते है? ऐसा विचार कर वह परीक्षा छोड़कर चला आता है। उसका मन वहाँ नहीं लगता क्योंकि उसके मन में यह विचार बार-बार आता है कि उनके पिता ने आत्महत्या क्यों की ? इस रहस्य का पता न लगने के कारण वह स्वस्थ नहीं रह सकता और वह परीक्षा छोड़कर चला आता है। जब मुरारीलाल उन्हें परीक्षा छोड़कर आने का कारण पूछते हैं, तो मनोज कहता है कि -

''मनोजरशंकर - आपको केवल छः सौ रूपये वेतन मिलता है और छः सौ आपने भेज दिये। घर का काम कैसे चलेगा ?

मुरारीलाल - इसकी चिन्ता तुम्हें क्यों हो ?

मनोजशंकर - इस सन्देह में कि इस प्रकार आपके नैतिक पतन की सम्भावना है। अपना सारा वेतन मुझे देकर आप अनुचित रीति पर आने लिए रुपया ...

मुरारीलाल - हो सकता है ..... लेकिन तुम्हारा क्या ?

मनोजशंकर - (चित्र उठाकर) आप कह सकते हैं, यदि यह मारा गया हो तो इसमें आपका अपराध किस अंश तक होगा?

(तीव्र दृष्टि से उनकी ओर देखता है)

मुरारीलाल - (सन्देह से) तुम्हे क्या हो गया ?

मनोजशंकर - (गम्भीर होकर) आज पन्द्रह दिन से बाबूजी को बराबर स्वप्न में देखता हूँ। मेरा मानसिक रोग बढ़ गया है। ..... (जोर से साँस लेकर)

कलेजे में लौ उठकर जैसे आँख फोड़कर निकल जाना चाहती है। यही दशा रही तो मैं दस पाँच दिन भी नहीं जी सकता। मेरे मरने से आपका क्या लाभ होगा ? (मुरारीलाल की ओर ध्यान से देखने लगता है)

मुरारीलाल - मैं तुम्हें अपने पुत्र से किसी अंश में भी कम नहीं समझता; मैं तुम्हें मार ड़ालना चाहता हूँ ? जिसके लिए चोरी करे वह कहे चोर ?

मनोजरशंकर - दस वर्ष का समय निकल गया। आप रूपये के बल पर मुझे विनोद और ऐश्वर्य में अन्धा बना देना चाहते हैं, जिससे मैं आपसे न पूछूँ कि उन्होंने आत्महत्या क्यों की .... बाबूजी ने आत्महत्या क्यों की ? ज्यों-ज्यों समय बीतता जा रहा है यह रहस्य मुझसे दूर होता चला जा रहा है। लेकिन मेरे मन में, मेरी अन्तरात्मा में जो आग लगी है वह कितनी दारुण है, आप उसे देखना नहीं चाहते। इस तरह कब तक मेरे प्राण बचेंगे?''[1]

इस तरह इस संवाद के द्वारा मनोज की मानसिक स्थिति स्पष्ट रूप से हमारे सामने दिखायी देती है। इसके साथ ही इस नाटक में चंद्रकला, मुरारीलाल, मनोरमा के भी संवाद भी इसमें आ जाते है।

'संन्यासी' नाटक में भी इस प्रकार के कई संवाद मिलते है। जैसे कि - किरणमयी मुरलीधर से प्रेम करती है। लेकिन उसका विवाह दीनानाथ के साथ होता है, जो वृध्द है। वृध्द होने पर भी उनकी उपभोग की इच्छा चरम सीमा पर है। लेकिन किरणमयी का मन, शरीर दीनानाथ के साथ नहीं लग सकता। परन्तु दीनानाथ हर बार अपनी वासना की पूर्ति करना चाहते हैं। इसी कारण किरणमयी के मन में उनके प्रति घृणा, नफरत पैदा हो जाती है और वह चिढ़कर एक बार दीनानाथ से कहते है -

''किरणमयी - फिर वही। तुम दिन-रात में कोई दो घंटा इसके लिए नियत कर लो।''[2]

साथ में वह यह भी कहती है कि तुम्हें जब देखती हूँ तो पिताजी याद आते हैं। इन सब स्थिति से किरणमयी की मानसिक स्थिति स्पष्ट रुप से हमारे सामने आ जाती है। इस प्रकार के कई संवाद विवेच्य नाटकों में आते है।

3. पात्रों के हाव-भाव और अंर्तद्वन्द्व का चित्रण -

मिश्र जी ने पात्रों के मुख से केवल संवाद ही नहीं कहलवाए हैं अपितु उनके कथन का दूसरे पात्र पर क्या प्रभाव होता है ? क्या प्रतिक्रिया होती है? इसका सुन्दर निर्देशन भी किया है। जैसे कि - 'सिन्दुर की होली' नाटक में प्रमुख पात्र मुरारीलाल ने केवल आठ हजार रुपये के लिए मनोज के पिता की हत्या की थी। हत्या करने में माहिरअली ने भी सहायता की थी। यह रहस्य दस वर्षों से उन दोनों ने मनोज से छिपा लिया है। लेकिन उन दोनों का भी मन अंदर से कोसता रहता है। मन ही मन माहिरअली घबरा हुआ दिखायी देता है। जब रजनीकान्त की हत्या भी हो जाती है तब वह बहुत ही घबराता है और एक दिन बड़बड़ाता रहता है। तब माहिरअली के मन के भाव उसके चेहरे पर इस तरह दिखायी देते है -

मनोरमा - ओह ! कितना अँधेरा है ..... आज की रात तो जैसे .... माहिर ! माहिर ! अरे सो गये क्या ?

माहिरअली - नहीं - सो नहीं रहा हूँ .....

मनोरमा - क्या कर रहे हो? इस तरह बुलान पर भी नहीं बोलते ?

माहिरअली - आज की रात परलय है ..... किसी को बोलना नहीं चाहिए। यही बैठे - बैठे झपकी आ गयी ..... बड़ा ड़रावना सपना देखा है ..... अभी-अभी ..... दो काले आदमी (जोर से सांस लेकर) शैतान की तरह खोफनाक (खम्भे की ओर

हाथ उठाकर) इससे भी उंचे थे... हाँ इससे भी उँचे ... काले, लम्बे - लम्बे दाँत ओठ के बाहर हो गये थे, बड़े- बड़े बाल (ड़रकर चारों ओर देखता है, हाथ उठाकर ऊपर से नीचे को धीरे-धीरे खींचता है) यहीं मेरे सामने उतर पड़े मेरा हाथ पकड़कर (बायाँ हाथ आगे की ओर बढ़ा देता है) खींचने लगे ..... मैं घबड़ाकर जाग पड़ा। मालूम हो रहा है जैसे इधर चारों ओर भूत घूम रहे हैं।''[3]

इससे माहिरअली के मन की गूढ़तम आंतरिक स्थिति का परिचय मिल जाता है। नाटक के बहुत से संवाद पात्रों की आंतरिक स्थिति का चित्रण करनेवाले दिखायी देते हैं।

मिश्रजी के 'संन्यासी' नाटक में किरणमयी का वृध्द दीनानाथ से विवाह हो जाता है। लेकिन वह अपने पति से असन्तुष्ट है। उसका वह नैराश्य इन शब्दों में प्रकट होता है -''अगर उसका विवाह किसी मजदूर से भी हुआ होता और जो मजदूर बुढ्ढा नहीं होता तो बिना किसी शान के ज़िन्दा रहती।''[4] सच बात तो यह है कि किरणमयी मुरलीधर से प्रेम करती है। लेकिन किरणम्यी केवल समाज के साथ समझौता करने के लिए दीनानाथ के साथ रहना स्वीकार करती है। मानसिक रुप से वह अपने-आपको मुरलीधर की विधवा मानती है क्योंकि वह स्पष्ट घोषणा करती है - ''वह (मुरलीधर) मेरे भीतर है, बराबर रहेगा, इस जिन्दगी में, दूसरी जिन्दगी में, जब कभी जन्म लूँगी वह मिलेगा।''

इन सभी बातों से किरणमयी के मन की अवस्था, उनके मन में चल रहा अर्न्तद्वव्द स्पष्ट रूप से हमारे सामने आता है। इस प्रकार के कई उदाहरण भी नाटक में मिलते है।

इस प्रकार पात्रों के हावभाव और उनके अर्न्तद्वव्द का चित्रण संवादों के माध्यम से ही हुआ है। नाटक के पात्रों के संवादों द्वारा उनके हावभाव और अर्न्तद्वंव्द के चित्रण द्वारा वातावरण निर्माण हुआ है।

4.5.2 बाह्य वातावरण -

नाटकों के बाह्य वातावरण से भी देशकाल वातावरण का निर्माण हो जाता है। निम्न प्रकार इसके अंतर्गत आ जाते है -

1. सामाजिक परिस्थिति
2. राजनीतिक परिस्थिति
3. धार्मिक परिस्थिति
4. सांस्कृतिक परिस्थिति

1. सामाजिक परिस्थिति -

सामाजिक जीवन से संबंध रखनेवाले सभी वर्णन, वेशभूषा, भाषा, रीति-रिवाज, सामाजिक वर्ग, शिक्षा, संस्कृति, सामाजिक व्यापार का चित्रण होता है। मिश्रजी के नाटकों में भारतीय समाज जीवन की बड़ी मनोरम झाँकी मिलती है। सामाजिक नाटकों में सामाजिक विचारों की स्थिति कुछ असाधारण है।

मिश्रजी के सामाजिक नाटकों की कथावस्तु मध्यम तथा उच्च मध्यम वर्ग के पात्रों तक ही सीमित है। उच्च वर्ग के पात्रों में उनके बहुत ही थोड़े-से पात्र आते है और निम्न वर्ग के पात्रों में घरेलू नौकर तथा उसी स्तर के दूसरे पात्र आते हैं। अस्तु, स्वभावत: उनके नाटकों में उच्च-मध्यवर्ग तथा मध्यमवर्गीय समाज का ही चित्रण हुआ है। स्त्री-पुरुष सम्बन्धों की चर्चा हो चुकी है, यहाँ हम शिक्षा तथा उससे सम्बन्धित प्रश्नों पर मिश्रजी के नाटकों में व्यक्त विचारधारा पर विचार करेंगे।

श्री. लक्ष्मीनारायण मिश्रजी ने 'सिन्दूर की होली' में भारतीय नारी के त्याग और तपस्या की ही पुनरावृत्तियाँ मनोरमा के ही चरित्रं में की हैं जो भारतीय रूढ़िवादी आदर्श का प्रतीक

है। विधवा विवाह की अस्वीकृति का कारण मिश्र जी का भारतीयता का मोहमात्र है। किसी बौध्दिक तर्क की व्युत्पत्ति नहीं। समाज मान्यता के अनुसार भारतीय नारी जब पुरुष को एक बार पति मानती है; तो आजीवन उसके साथ जीवन बिताती है चाहे वह कैसा भी क्यों न हो। उसी प्रकार जब चंद्रकला ने रजनीकान्त को पति के रूप में एक बार स्वीकार कर लिया तो वह आजीवन पति मानने के लिए तैयार होती है उसके मरणोपरान्त भी दूसरी शादी वह करना नहीं चाहती। यह एक ऐसा व्यवहार है जो भारतीय नारी के विशिष्ट चरित्र का उद्‌घाटन कर देता है। साथ ही मिश्र जी ने समाज की न्यायव्यवस्था पर भी व्यंग्य किया है। मिश्र जी ने इस नाटक में समाज की विविध प्रवृत्तियों को उजागर करने का प्रयास किया है।

शिक्षा के बारे में विचार व्यक्त करते हुए मिश्र जी ने 'संन्यासी' में कहा है ....."शिक्षा की इस रीति को मैं पसन्द नहीं करता। यह व्यक्तित्त्व का नाश कर मनुष्य को मशीन बना देती है। शिक्षा की इस प्रणाली में अच्छे और बुरे मस्तिष्क वाले सभी एक साथ जोत दिये जाते हैं। फल अच्छा नहीं होता। संस्कार-चरित्र-बल किसे कहते हैं, इसका पता इस शिक्षा मेंनहीं चलता, शेक्सपियर को पढ़ लेने के बाद मैकबैथ बन जाना आसान हो उठता है।"[5]

सह शिक्षा का मिश्रजी ने विरोध इन शब्दों में किया है - "इस शिक्षा में जो सबसे बढ़कर बुराई है, वह अब आई है। और वह है लड़के और लड़कियों का साथ पढ़ना। यह रीति पश्चिम से आयी है, किन्तु अपने साथ वह सहिष्णुता नहीं ला सकी जो पश्चिम में उसका मूल तत्त्व है। यह हो, अच्छा है, किन्तु उसके साथ वह सहिष्णुता भी रहनी चाहिए।"[6] कॉलेजों में छात्र-छात्राओं के एक साथ पढ़ने पर क्या होता है यह 'संन्यासी' में छात्रों के वार्तालाप के रूप में इस प्रकार प्रकट किया गया है .... "इस बार मिसेज गुप्ता के ऊपर गेंदे का फूल पड़ा .... दूसरी बार कदम्ब का पड़ेगा। दर्जे में जिस ओर परियाँ बैठेंगी, लड़के देखेंगे ही। मुझे तो स्वयं उन बेचारों पर दया आती है जो बिना किसी लाभ के प्यासी आँखों से उनकी ओर देखा करते हैं।"[7]

मिश्र जी ने इन विवेच्य नाटकों में आधुनिक शिक्षा के क्षेत्र में चारित्रिक पतन केवल छात्र-छात्राओं में नहीं दिखाया गया है, कॉलेज के प्राध्यापक भी उतने ही (कदाचित् छात्रों से अधिक) गिरे हुए हैं। 'संन्यासी' का प्रोफेसर रमाशंकर मालती पर डोरे ड़ालता है और अन्त में उससे विवाह भी कर लेता है।

इस प्रकार की समाज में जो अनेक प्रवृत्तियाँ दिखायी देती है उन प्रवृत्तियों को उजागर करने का प्रयास नाटककार ने किया है। मिश्र जी ने विवेच्य नाटकों में सामाजिक विषयों में से अधिक महत्त्व स्त्री-पुरुषों के सम्बन्ध को ही दिया गया है परन्तु सामाजिक दृष्टि से परम्परा का पालन करने का ही आग्रह है। व्यक्ति को समाज के सामने झुकना पड़ेगा ... समझौता करना ही पड़ेगा यही मिश्रजी के विचारों का सार है।

2. राजनीतिक परिस्थिती -

इसमें राजनीतिक घटनाओं और राजनीतिक चरित्रों का उद्‌घाटन किया जाता है। मिश्रजी के नाटकों में राजनीतिक चिन्तन का स्वरुप भी यत्र-तत्र मिलता है। मिश्र जी ने राजनीतिक समस्या को प्रमुख स्थान तो नहीं दिया, किन्तु कोई लेखक, नाटककार, उपन्यासकार या कवि अपने समय की प्रवृत्तियों से प्रभावित हुये बिना नहीं रह सकता। 'सिन्दूर की होली' में स्पष्ट रूप से यह कहा गया है कि राजनैतिक जमींदार लोग पैसे देकर न्याय खरीदते हैं और गरिबों का शोषण करते रहते है। पैसों के कारण सब सत्ता उनके हाथ में ही होती है। मुरारीलाल तो इसी का ही प्रतिनिधी पात्र है।

लक्ष्मीनारायण मिश्र के समस्या नाटकों में ऐसे राष्ट्रवादी पात्रों का अवतरण किया है, जिनके संघर्षों के माध्यम से तत्कालीन अनेक राजनीतिक परिस्थितियाँ सामने आती है। महात्मा गांधी की राजनीतिक मान्यताओं का अनुसरण करते हुए वे पात्र अंग्रेजी सरकार के विरूध्द राजनीतिक विद्रूपताओं के आलोचक हैं, एवं उसके विरुध्द लड़ते हुए अपना बलिदान करते हैं। मुरलीधर एक

संपादक है और राष्ट्रवादी सिपाही भी। अंग्रेजी शासन के विरुद्ध वह क्रांतिकारी लेख लिखता है, जिसके द्वारा जनता में नई राजनीतिक चेतना जगाता है। समसामायिक राजनीतिक समस्या के सम्बन्ध में मुरलीधर का कथन है- ''जब हम लोगों के साथ जनता की कोई सुसंगठित शक्ति नहीं है, तब यह एक-दूसरे की सहायता न करने से हम लोग कही के न हो सके।''

इसी नौकरशाही के विरुद्ध लेख प्रकाशित करने के अभियोग में मुरलीधर को जेल जाना पड़ता है, जहाँ की यातना से वह क्षयग्रस्त होकर मर जाता है। मुरलीधर की दृष्टि में नौकरशाही देश की सबसे बड़ी अराष्ट्रीय एवं अप्रजात्मक प्रवृत्ति है, जो अंग्रेजी शासन की रीढ़ बनी हुई है। सरकारी अफसर मि.राय से जेल में वार्तालाप करते हुए मुरलीधर कहता है -

मुरलीधर - यह कानून टिका भी है आप ही लोगों के बल पर। यदि आप लोग जितने सभी हिन्दुस्तानी नौकरियों में हैं, केवल एक दिन के सरकार से नाता तोड़ ले तो फिर

मि. राय - तब यह सरकार नहीं रहेगी, लेकिन सभी लोग हममें नैतिक बल नहीं है।''[8]

इस प्रकार बड़ी-बड़ी सरकारी नौकरियों का सुख भोगनेवालों ने देश के स्वतंत्रता संग्राम में योग नहीं दिया, प्रत्युत राष्ट्रीय आन्दोलनों को कुचलने का काम किया। किन्तु दमन से विचलित न होते हुए, स्वतंत्रता संग्राम के सिपाही जनता के बीच राष्ट्रवादी राजनीतिक चेतना भरते रहे। उन्होंने अंग्रेजी शासन की कुटनीतियों का निर्भय होकर खण्डन किया तथा राष्ट्र को राजनीतिक नव-जागरण का सन्देश दिया।

'संन्यासी' मिश्र जी का प्रथम नाटक है। इसकी रचना उस समय हुई कि एशिया में पश्चिम का राजनीतिक प्रभुत्व था और यहाँ का जन-समाज भीतर-ही-भीतर अकुला रहा था। भारत में राजनीतिक आन्दोलन चल रहा था। इसी राजनीतिक प्रभाव के कारण संन्यासी में मिश्र जी ने विश्वकान्त और अहमद के द्वारा काबुल में एशियाई संघ का निर्माण किया।

अंग्रेजी शासन की नींव अहिंसात्मक संग्राम के द्वारा हिला देने के उपक्रम की दिशा में खादी-धर्म की उद्‌भावना राष्ट्रवादी राजनीति की एक रचनात्मक उपलब्धि थी। इस धर्म के प्रति आस्था राष्ट्रीयता का पर्याय बन गयी थी। खादी को समस्त जटिल राजनीतिक समस्याओं के समाधान का आधार-स्तम्भ माना जाने लगा था। 'संन्यासी' में खादी धर्म के राजनीतिक महत्त्व की भी विवेचना हुई है :-

"दीनानाथ - साड़ी बदलो, मैं इस खादी-धर्म से घृणा करता हूँ।

किरणमयी - इस युग में कोई भी भला मनुष्य, चाहे वह स्त्री हो या पुरूष खादी धर्म से घृणा नहीं कर सकता। संसार इसकी उपयोगिता समझ रहा है। करोडों गरीबों की भूख इससे मिट सकती है। तुम्हारा देश स्वाधीन हो सकता है।"[9]

खादी-धर्म के प्रति जनता के विश्वास का कुछ ढोंगी नेताओं ने अनुचित लाभ भी उठाया। वे चुनाव के समय में खद्दर पहन लेते थे और बाकी समय में विदेशी मिलों के बने कपड़े का उपभोग किया करते थे। यह उनकी राजनीतिक प्रवंचना थी। इससे राष्ट्रवादी राजनीति की लक्ष्य-पूर्ति में पर्याप्त व्यवधान पड़ा।

इन सभी बातों से उस काल, समय की राजनीतिक परिस्थिति स्पष्ट रूप से हमारे सामने आती है।

2. धार्मिक विचारधारा -

मिश्र जी के नाटकों में धार्मिक विचारों को प्रधानता मिली है। वे स्वयं हिन्दू धर्म के समर्थक थे। उन्होंने अपने सभी नाटकों में इसका समर्थन किया है। सामाजिक तथा समस्याप्रधान नाटकों में उनका ध्यान विशेष रूप से स्त्री-पुरुष यौन संबंधों तथा उनके सामाजिक पक्ष पर रहा है। फिर भी जब भी अवसर मिला, तब उन्होंने परंपरा को तोड़ने का आग्रह नहीं किया। इसीलिए मिश्र

जी ने तलाक और विधवा विवाह का विरोध किया है। हिन्दू धर्म में स्त्री की शारीरिक पवित्रता पर बल दिया है इस सिध्दांत के आधार पर यौन संबंध का सामाजिक तथा धार्मिक दृष्टि से अत्याधिक महत्त्व है। 'सिन्दूर की होली' की मनोरमा का विश्वास है कि हिन्दू विधवा से बढ़कर कविता और दर्शन नहीं मिलेगा। इसलिए एक जगह मनोरमा के माध्यम से उन्होंने कहा है कि -

''समाज की चेतना के लिए विधवाओं का होना आवश्यक है। तुम जीवन का, दूसरा पहलू भी समझते हो .... देखते हो, उसके भीतर संकल्प है, साधना है, त्याग और तपस्या है ... यही विधवा का आदर्श है और यह आदर्श तुम्हारे समाज के लिए गौरव की चीज है....''[10]

4. सांस्कृतिक विचारधारा -

मिश्र जी के नाटकों में भी भारतीय संस्कृति के दर्शन होते है। स्वयं मिश्र जी भारतीय संस्कृति के समर्थक है। उन्होंने अपनी सभी रचनाओं में भारतीय संस्कृति का जिक्र किया है। उनके मतानुसार जो कर्म और आचरण में महान है, वे सभी आर्य है। आर्यों की संस्कृति ही भारतीय संस्कृति है।

मिश्र जी ने अपने सामाजिक तथा समस्याप्रधान नाटकों में भी आज के युग का सांस्कृतिक दृष्टिकोण स्पष्ट किया है। इन नाटकों में उन्होंने स्पष्ट कहा है कि प्राचीन भारतीय आर्यसंस्कृति ही आदर्श संस्कृति थी और आज भी उसी का अनुकरण करने में हमारा कल्याण है।

मिश्र जी ने अपने आलोच्य नाटकों में अनासक्त कर्मयोग का समर्थन करते हए त्याग और भोग का समन्वय प्रतिपादित किया है और जीवन के लिए इसी मार्ग को श्रेयस्कर सिध्द किया है।

निष्कर्ष :-

देश, काल तथा वातावरण नाटक का अनिवार्य तत्त्व है। उपन्यास की तरह ही नाटक में देश, काल तथा वातावरण का चित्रण यथार्थ औरहृदयग्राही होना चाहिए। जिससे पात्रों के

व्यक्तित्त्व में स्पष्टता और वास्तविकता आ जाती है। इसलिए प्रत्येक युग, प्रत्येक देश तथा वातावरण का चित्रण, उसकी संस्कृति, सभ्यता, रीति-रिवाज, रहन-सहन और वेशभूषा के अनुरूप होना चाहिए। परंतु इस चित्रण में रंगमंच की सुविधाओं और सीमित स्थान का ध्यान रखना भी अत्यंत आवश्यक है।

सिन्दूर की होली -

'सिन्दूर की होली' नाटक का देश-काल अंग्रेजी शासन के समय के भारत का है, जिसमें तत्कालीन समाज के उच्च तथा मध्य वर्ग की सामाजिक स्थितियों का चित्रण किया है। स्थान की दृष्टि से देखा जाय तो नाटक का क्षेत्र अधिक विस्तृत नहीं हुआ है। लगभग सभी घटनाएँ डिप्टी कलेक्टर मुरारीलाल के प्रौढ जीवन से संबंधित है। अधिकतर घटनाएँ उनकी कोठी के बड़े कमरे या बरामदे में घटित हुई है।

नाटक में जिस काल का जिक्र किया है, वह भी अधिक वर्षों का नहीं है। सारी घटनाएँ लगभग दस वर्षों के भीतर घटित हुई है। यह काल अंग्रेज शासन के समय का है। जिसमें जमींदारी प्रथा के अंतर्गत गाँवों का शासन चलता था। जमींदार के हाथ में सारी शासन व्यवस्था बाँधी गई थी। नाटक में ऐसी कोई घटना नहीं है, जो काल की दृष्टि से असंगत जान पडे।

नाटक में सारा वातावरण स्थान और काल के अनुरूप है। तत्कालीन परिस्थितियों के अनुरूप ही घटना विकसित होती जाती है। मुरारीलाल का संपूर्ण कार्य-व्यापार उस समय की परिस्थिति के अनुरुप है। नाटक में सिर्फ मुरारीलाल के अर्थ-लोभ को ही ठोस रूप में प्रस्तुत किया है।

संन्यासी -

'संन्यासी' नाटक का देश-काल वह समय है, जब देश में स्वतंत्रता का नारा चल रहा था। ब्रिटीश सत्ता के विरोध में आवाज उठने लगी थी। ब्रिटीश सत्ता इन आवाजों को कुचलने के

लिए तैयार थी। उन्होंने सबसे पहले साहित्यकारों का आवाज बंद किया। उनकी लेखनियों को बंद कर दिया। उनका आवाज उन्होंने मुँह दबाकर शान्त किया है। जैसे देवधर और मुरलीधर जैसे साहित्यकारों को नजरबन्द करना, उन्हें कठोर कारावास की सजा देना, जैसी बातें उस समय का देशकाल प्रदर्शित करती है। साहित्यकारों के लेख या टिप्पणी में जन-जागृती का स्वर है, या स्वतंत्रता का बीज है इसे देखा जाता था। राजद्रोह के अपराध में गिरफ्तार किया जाता था। मुरलीधर कहता है -"जब तक हम लोगों के साथ जनता की कोई सुगंठित शक्ति नहीं है, तब तक एक-दूसरे की सहायतान करने में हम लोग कहीं के न रहेंगे। नौकरशाही इस बात पर तुल गयी है कि इस अभागे देश में स्वतंत्र विचारों का जन्म न हो सके।''

समाज में रहनेवाले बुध्दीजीवियों के मन पर नौकरशाही हावी हुअी थी। वे अपनी अस्तित्व रक्षा पर तत्पर थे। मुरलीधर कहता है - ''मैं नहीं चाहता तैयारी के इन्हीं दिनों में नौकरशाही की नजर तुम पर पड़े। असहयोग आन्दोलन में कच्चे सिपाहियों को भी मैदान में उतरना पडा था। परिणाम अच्छा नहीं हुआ।''

नाटक में उत्तरी भारत के कई जिले और अफगाणिस्तान तक इसके स्थान का विस्तार है। परंतु विशेष घटना स्थल वहीं है, जहाँ पर रमाशंकर, दीनानाथ, मालती आदि के निवासस्थान है।

संदर्भ सूची

1. लक्ष्मीनारायण मिश्र, सिन्दूर की होली, पृ.45-46-47
2. लक्ष्मीनारायण मिश्र, संन्यासी, पृ.54
3. लक्ष्मीनारायण मिश्र, सिन्दूर की होली, पृ.90-91
4. लक्ष्मीनारायण मिश्र, संन्यासी, पृ.106
5. लक्ष्मीनारायण मिश्र, भूमिका, पृ.12
6. वही, पृ. 13
7. लक्ष्मीनारायण मिश्र, संन्यासी, पृ.80
8. वही, पृ.154
9. वही, पृ.110
10. लक्ष्मीनारायण मिश्र, सिन्दूर की होली, पृ.82